S/10

अध्याय-१

श्रमनीति

विषय प्रवेश

20.201
(1-20)

S/10

—भारतीय मजदूर संघ

प्रस्तावना

'Labour Policy' पुस्तक जो मा० श्री ढेंगड़ी जी, गोखले जी व मेहता जी द्वारा लिखी गई है। यह प्रस्तुत पुस्तिका उसी पुस्तक के अध्याय क्र० १ की हिन्दी रूपान्तर है।

इसके अनुवादक हैं लखनऊ विश्वविद्यालय के वाणिज्य विभाग के डा० महेन्द्रप्रताप सिंह।

इसीप्रकार शेष १९ अध्यायों के भी हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किये गये हैं।

—प्रकाशक

विषय-प्रवेश

नेशनल कमीशन ऑन लेबर, जिसे राष्ट्रीय श्रम आयोग कहेंगे, के सम्मुख दो कार्य हैं :—

(१) श्रम के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों का एक वृहत पुनर्वेक्षण और (२) ऐसी संस्तुतियां करना जो भविष्य के लिए मार्ग-प्रदर्शक रेखायें बन सकें।

भारतीय मजदूर संघ के विचार-प्रस्ताव को समझने और उसका स्वागत करने के लिये भारतीय श्रम-आन्दोलन में भारतीय मजदूर संघ की भूमिका का एक सूक्ष्म पुनर्वेक्षण करना आवश्यक होगा। इसके लिये हम साथ में निम्नलिखित साहित्य भी प्रस्तुत कर रहे हैं :—

(अ) भारतीय मजदूर संघ ही क्यों ?

(ब) भारतीय मजदूर संघ स्मारिका,

(स) महामंत्री की रिपोर्ट (१९५५-१९६७)

(द) बैंकिंग-रचना सम्बन्धी विभिन्न विशेषतायें

उपरोक्त साहित्य पर दृष्टिपात करने से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होंगी—

(अ) भारत के ट्रेड यूनियन आन्दोलन में भारतीय मजदूर संघ की भावात्मक आधार पर एक अलग ही विचार-प्रस्तावना है।

(ब) इसने भारत के सभी भागों और सभी प्रमुख उद्योगों में ट्रेड-यूनियनों और मौलिक विचारों के अनुसार प्रशिक्षित श्रमिकों की एक अखिल-भारतीय आधार शिला उत्पन्न करके अपना प्राथमिक कार्य पूर्ण कर लिया है।

(स) आर्थिक प्रगति की स्थिति के लिये वह पूर्ण संतुलित व तत्पर है।

भारतीय मजदूर संघ के इतिहास और विकास के उपरोक्त तथ्य और उसकी वर्तमान स्थिति यह अनिवार्य बनाते हैं कि राष्ट्रीय श्रम आयोग की प्रश्नावली के प्रति उसकी विचार-प्रस्तावना श्रम आन्दोलन के सामान्य अंगों की अपेक्षा भिन्न हो। इस विषय का विस्तृत विवेचन हम अपने मौखिक प्रस्ताव के समय करेंगे।

इसी पार्श्व भूमिका में हम राष्ट्रीय श्रम आयोग के निर्देशित कार्यों के क्षेत्र में आने वाले विषयों पर अपने विचारों का प्रस्ताव कर रहे हैं। इन विचारों का प्रस्तुतीकरण एक लघुशोध ग्रन्थ के रूप में किया गया है। प्रथमतः हम भारत में श्रम आन्दोलन के इतिहास का एक आलोचनात्मक विवेचन करेंगे। तत्पश्चात हम 'श्रम आन्दोलन से राष्ट्र की अपेक्षाओं' पर एक वक्तव्य देंगे और चालू आर्थिक स्थितियों के सन्दर्भ में उसके निहित अर्थों की परीक्षा करेंगे। इसके पश्चात हम श्रम-कानून और सरकारी–नीति के प्रभावों पर विचार करेंगे। तदुपरान्त हम भारतीय श्रमिकों के कार्य करने और जीवनयापन के विभिन्न पहलुओं का विस्तृत विवरण देंगे। इसी विश्लेषण के दौरान हम राष्ट्रीय श्रम आयोग की संचारित सम्पूर्ण प्रश्नावली का ध्यान रखते हुये विभिन्न विषयों पर अपने विस्तृत सुझाव प्रस्तुत करेंगे। अन्त में हम नीति के महत्वपूर्ण पहलुओं पर नियन्त्रण करने वाले सिद्धान्तों के रूप में कुछ निश्चित आधारभूत सम्बोधों का प्रतिपादन करेंगे। हमें आशा है कि राष्ट्रीय श्रम आयोग अपने कार्य में हमारे योगदान को समझने में हमारे वैचारिक प्रस्ताव को सहयोगी और कुशल पायेगा।

इतिहास की समीक्षा

भारत के श्रम आन्दोलन के इतिहास और विकास पर अनेक प्रख्यात लेखकों ने पुस्तकें लिखी हैं। यहां पर यह आवश्यक नहीं कि उनके द्वारा

प्रणीत सभी बातों का पुनर्कथन किया जाये। परन्तु इन लेखकों की योग्यता, प्रमाणिकता और प्रयत्नों के प्रति पूर्ण श्रद्धा रखते हुए भी यह कहा जा सकता है कि उन्होंने भारतीय श्रम आन्दोलन का जो विवरण दिया है वह पक्षपात और राजनीतिक झुकाव से प्रभावित हैं और इसका प्रतिफल यह है उनसे हमें आन्दोलन का एक पूर्ण और व्यावहारिक परिज्ञान नहीं मिलता है। इस कारण यह आवश्यक समझा गया है कि वर्तमान वस्तु–स्थिति के आकलन और भावी नीति के प्रतिपादन के लिये निकट भूत की घटनाओं का एक सूक्ष्म विवेचन किया जाये।

भारत के श्रम आन्दोलन के निकट भूत के इतिहास पर विचार करने से पहिले यह कहना अप्रसांगिक नहीं होगा कि उद्योगों में मानवीय सम्बन्धों के क्षेत्र में भारत का एक महान योगदान रहा है। श्रमनीति का प्रतिपादन जो शुक्रनीति, महाभारत के सर्गों और अन्य पुरातन साहित्य में उपलब्ध है, उसे यदि आधुनिक मान–दण्डों से देखें तो भी उसे हमें उन्नत, विवेकपूर्ण और सबल मानना पड़ेगा। समस्त भारतीय दर्शन जीवन के संलिष्ट दृष्टिकोण पर आधारित होने के कारण उन विचारों में बहुत कुछ है जिसका अनन्त महत्व उन व्यक्तियों के लिए है जो सबल सामाजिक आधार शिला के निर्माण के लिये सचेष्ट हैं, अथवा प्राचीन और अधिक वैज्ञानिक शब्दों में, जनसाधारण के मिलन (लोक–संग्रह) और सह–प्रचलन (लोक यात्रा) के लिये प्रयत्नशील हैं। कदाचित धर्मनिरपेक्षिता प्रगतिशीलता और उसके अवैज्ञानिक पर्य्यायों की प्रेतबाधा को महत्व देने के कारण ऐसा हो सकता है कि इन पुरातन विवेक-पूर्ण शब्दों को ठीक प्रकार से न समझा जाये और सन्दर्भ होते हुये भी छोड़ दिया जाए।

निकट भूत में गत शताब्दी के अन्तिम दशकों में श्रम को संगठित करने, समान मांगों के प्रतिपादन और उनकी शिकायतों को दूर करने की दिशा में कुछ पहिले व्यक्तिगत प्रयत्न किये गये। ऐसे अनेक मामलों में उनका स्वरूप तदर्थ समितियों का था। बम्बई और मद्रास में समय

समय पर आवश्यकतानुसार कुछ हड़ताल-कमेटियां बनाई गयीं। परन्तु ये कमेटियाँ कभी भी स्थायी आधार नहीं बना सकीं। सरकार और सेवायोजक (मालिक) दोनों ही श्रमिकों के कार्यक्रमों के प्रति शत्रुता का व्यवहार करते रहे। परन्तु फिर भी कुछ प्रख्यात व्यक्तियों-विशेषतया श्री लोखण्डे की स्मरणीय लगन के फलस्वरूप काफी मात्रा में मार्गदर्शक कार्य हुआ, जिन्हें भारतीय ट्रेड यूनियन आन्दोलन का जनक कहा जा सकता है। स्थायी आधार पर एक ट्रेड यूनियन बनाने का पहला व्यवस्थित प्रयत्न बम्बई और कलकत्ता के पोस्टल आफिसों में सन १९०६ में किया गया। इन प्रयत्नों का प्राथमिक स्वरूप तो क्लबों का था, परन्तु शीघ्र ही वह नियमित रूप से कार्य करने वाली ट्रेड यूनियनों में बदल गया।

प्रथम महायुद्ध मूल्य वृद्धि के कारण सन् १९१६–१७ में एक सामान्य उथल–पुथल उत्पन्न की और श्रमिकों के स्वार्थों के संरक्षण के लिये अनेक यूनियनों का निर्माण किया गया। यह महत्वपूर्ण है कि आज दिन तक श्रमिकों को मूल्य वृद्धि के विरुद्ध सुरक्षा के लिए संगठित करना ही एक प्रमुख कारण रहा है। भारतीय ट्रेड यूनियन आन्दोलन को अभी भी श्रमिकों के जीवन निर्वाह के स्तर की वास्तविक अर्थों में वृद्धि करने के निमित्त अगला अनुलोम या आक्रमक पग उठाना शेष है। जैसा भी हो यह तो सत्य है ही कि प्रथम महायुद्ध के काल में श्रम आन्दोलन का आकार बढ़ा और आधारभूत विषय बढ़ते हुए मूल्यों से सुरक्षा का था। इस काल में २-३ सप्ताह चलने वाली पहली हड़ताल बम्बई के डाक वितरकों ने की। अन्ततः सरकार ने डाक-वितरकों की मांगों को मान लिया और उन्हें युद्ध–कालीन–भत्ता देना स्वीकार कर लिया। इस घटना से सारे देश के पोस्टल यूनियनों के एकीकरण को प्रेरणा मिली। इसी से टेक्सटाइल कर्मचारियों को भी प्रेरणा मिली जो डा० बैप्टिस्टा के नेतृत्व के चारों ओर एकत्रित हो गये। सालिसिटर श्री जिनवाला ने भी श्रम आन्दोलन को मूल्यवान सहायता दी। इसी अवधि में पोर्टट्रस्ट यूनियनों का भी संगठन हुआ।

सन् १९१९ से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी ट्रेड यूनियन आन्दोलन में भाग लेना प्रारम्भ किया। इसका मुख्य दृष्टिकोण यह था कि ट्रेड यूनियों को ब्रिटिश से संघर्ष करने के लिये एक अस्त्र के रूप में उपयोग किया जाये परन्तु उसने प्रारम्भ में श्रम आन्दोलन के लिये कुछ निर्माणात्मक और अच्छा कार्य भी किया। श्री खापर्डे के सभापतित्व में भारत सरकार ने एक पोस्टल इन्क्वायरी कमेटी नियुक्त की जिसने काफी सामग्री संग्रहीत की। इसने ग्रेडों की अपेक्षा टाइम-स्केल की मांग को बढ़ावा दिया। यद्यपि उस समय यह मांग चन्द्रमा की मांग करने के समान माना गया परन्तु इस मांग के समर्थन में अखिल भारतीय पोस्टल यूनियन का निर्माण हो गया जिसने एक आन्दोलन किया और अन्तिम सफलता प्राप्त की। ट्रेड यूनियन आन्दोलन को इस प्रकार एक दृढ़ आधार मिला और कुछ समय के लिए पोस्टल यूनियन एक आदर्श बन गयी।

इसी काल में एक अन्य विशाल यूनियन रेलवे के लिये बनी। सन् १९१९ से पहिले भारतीय रेलों पर एक यूनियन काम कर रही थी जिसका नाम एन्गलो-इण्डियन रेलवे मेन्स फेडरेशन आफ इंडिया एण्ड बर्मा था। यह केवल एण्गलो इण्डियन ड्राइवरों, गार्डों और ए ग्रेड स्टाफ के स्वार्थों का ध्यान रखता था। भारतीय कर्मचारियों की आवाज इसके कार्यकलापों में बिल्कुल नहीं थी। इसलिये सन् १९१९ में इगतपुरी में जी० आई० पी० रेलवे में काम करने वाले कर्मचारियों की पहली कान्फ्रेंस की गई। जिसने कुछ मांगें रखीं और हड़ताल की धमकी दी। इसकी कुछ मांगों को मान लिया गया और जी० आई० पी० रेलवे मेन्स यूनियन ने दृढ़ता से कार्य को आरम्भ किया। इसके बाद सारे देश की रेलों में आन्दोलन व्याप्त हो गया और अनेक केन्द्र स्थापित किये गये। इसी समय अधिकारियों द्वारा दिए गये आश्वासनों के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में झगड़ा आरम्भ हुआ। सरकार ने एक द्विजन-कमेटी बनाई जिसमें उस समय के 'टाइम्स आफ इण्डिया' के सम्पादक और न्यायमूर्ति

चन्द्रावरकर थे। इस कमेटी ने सन् १९२१–२२ के काल में कार्य किया और अन्त में इसने कर्मचारियों के विवादों को मान्य किया।

इस समय तक अनेक सक्रिय ट्रेड यूनियन नेता जिनमें सर्वश्री एन. एम. जोशी, जषवाला, जिनवाला, एस० सी० जोशी, वी० जी० दल वी बैप्टिस्टा इत्यादि प्रमुख है, रंगमंच पर आए और उन्होंने विशेषतया पोर्ट ट्रस्ट, डाक स्टाफ, बैंक कर्मचारियों (प्रमुखतः इम्पीरियल बैंक और करेंसी), कस्टम, आयकर निम्नश्रेणी स्टाफ इत्यादि के शक्तिशाली यूनियनों का संगठन किया।

कम्युनिस्टों ने भारत के ट्रेड यूनियन आन्दोलन में प्रवेश करने का निर्णय सन् १९२३ में लिया। यह निर्णय रूस में लिया गया था और रूस ने इस कार्य की सहायता के लिए बड़ी मात्रा में धन और कार्यकर्त्ता दिये। ग्रेट ब्रिटेन से भी बड़ी संख्या में साम्यवादी कार्यकर्ता आए। सन् १९२५–२६ तक में अनेक विदेशी व देशी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों को साम्यवादी सिद्धान्तों में दीक्षित करने में सफल हो गये और सर्वश्री डांगे मिराजकर, मीमकर, जोगलेकर आदि व्यक्तियों ने गैर सरकारी (प्रमुखतः टेक्सटाइल श्रमिकों) कर्मचारियों को संगठित करना प्रारम्भ कर दिया। पहले उन्होंने नई यूनियनों का निर्माण करने का प्रयत्न किया परन्तु अपने प्रयत्नो में असफल हो जाने पर उन्होंने पुरानी यूनियनों में ही अपने जनता से सम्बन्धों के आधार पर घुसने का प्रयत्न किया और सभी विध्वंशकारी रीतियों के माध्यम से तत्कालिक नेतृत्व के विरोध में प्रचार किया।

इस समय बम्बई में टेक्सटाइल श्रमिकों के क्षेत्र में राष्ट्रीय नेतृत्व सर्वश्री एन० एम० जोशी, आर० आर० वाखले और मोहम्मद रज्जब का था। उन्होंने सन् ११२२–२३ में प्रथम टेक्सटाइल वर्कर्स यूनियन स्थापित की थी। सन् १९२५–२६ में कम्युनिष्ट भी इन यूनियनों में घुस आये और वृहत आधार पर हड़तालें आयोजित की गयीं। इस संघर्ष

में सन् १९२६–२७ की ६ माह पुरानी हड़ताल प्रसिद्ध है। इसके और अन्य असंतोष के प्रकटीकरण के फलस्वरूप श्रम सम्बन्धी रायल कमीशन की नियुक्ति से पहले एक फॉकेट कमेटी नियुक्ति की गई और सरकार ने शीघ्रता से श्रम सम्बन्धी १९२९ का विधेयक बनाया।

परन्तु श्रम कानून का इतिहास १९२९ के विधेयक से भी पुराना है और उसकी उत्पत्ति मद्रास की घटनाओं से सम्बद्ध है। श्री वी० पी० वाडिया के योग्य नेतृत्व में सन् १९२५ में बकिंघम और करनाटक मिल्स मद्रास ने एक हड़ताल घोषित की थी। मिल मालिकों ने इस कार्य को मैर कानूनी कार्य मानकर टार्ट के प्राविधान का आवाहन करते हुए एक मुकदमा प्रसंविदा अधिकारों का दायर किया और हड़ताल के विरुद्ध स्थगन आदेश और क्षतिपूर्ति की मांग की। वादी की इच्छा के अनुरूप एक स्थगन आदेश जारी किया गया और हड़ताल पुनः प्रारम्भ हो गई। इसी पार्श्व भूमिका में श्री एन० एम० जोशी ने ट्रेड यूनियनों के अधिकारों के लिए एक विधेयक पेश किया परन्तु तत्कालीन उद्योग, वाणिज्य और श्रम विभाग के कार्यवाहक सदस्य ने स्वयं इस सम्बन्ध में कानून बनाने का आश्वासन दिया और ट्रेड यूनियन एक्ट १९२६ पास किया गया। इसके पूर्व वर्कमेन्स कम्पेंशेशन एक्ट भी पास किया गया था।

श्रम कानून के प्रमुख अंगों और विरोधाभास में **AITUC** का निर्माण दोनों ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**) के कार्यकलापों से हुआ। ऐसा समझा गया कि प्रथम महायुद्ध की उत्पत्ति विकसित और अविकसित देशों की विषमताओं के कारण हुई थी और वार्सा की सन्धि के फलस्वरूप इस खराबी को दूर करने के लिये दो संस्थाओं, लीग आफ नेशंस और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का निर्माण किया गया।

ILO के प्रारम्भिक सदस्य के रूप में भारत को भी स्वीकार किया गया। यह एक त्रि-पक्षीय संस्था है जिसमें प्रत्येक सदस्य-देश अपने

प्रतिनिध नामजद करता है। **ILO** की प्रारम्भिक कान्फ्रेन्स १९१९ के लिए भारत सरकार ने श्री एन० एम० जोशी को श्रम सदस्य नामजद किया और इसके लिये श्रमिकों के लिए अत्यधिक सहयोग करने वाली संस्था सोशल सर्विस लीग से राय ली गई। **ILO** के पास एक ऐसा प्रभावी यत्र है जिसकी सहायता से वह यह सम्भव कर पाता है कि विभिन्न सरकारें उसके कन्वेन्शनों और संस्तुतियों पर कुछ अमल अवश्य करें, भारत के सभी श्रम कानून इन कन्वेन्शनों और संस्तुतियों से प्रभावित हैं। **ILO** की प्रतीति कमेटी को संतुष्ट करने के निमित्त ही भारत के प्रथम केन्द्रीय श्रम संगठन का निर्माण भी हुआ था। यह कमेटी चाहती थी कि सदस्य देशों के नामजद श्रम-सदस्यों का सम्बन्ध देश के सर्वाधिक प्रतिनिधि श्रम संगठन से रहे। सन् १९२० में **AITUC** के निर्माण का प्रमुख कारण **ILO** के प्रथम वार्षिक कान्फ्रेन्स के लिये श्रम-सदस्य का चुनाव करना था। इस प्रकार से श्रम कानून और केन्द्रीय श्रम संगठन के निर्माण दोनों में ही भारतीय ट्रेड यूनियन आन्दोलन को वास्तविक उत्साह एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन अर्थात **ILO** से मिला जिसको सरकार ने आश्वासन दिये थे। इस प्रकार से भारतीय ट्रेड यूनियन आन्दोलन के लिए गुलामी की मनोवृत्ति और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थितियां एक जन्मकालीन अभिशाप बन गये और आज भी इन विकृतियों से वह स्वतन्त्र नहीं हो सका है। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि अपने प्राविधिक पक्ष में भी ट्रेड यूनियनों ने कभी संघर्ष नहीं किया और न भारतीय श्रम की वास्तविक मजदूरी के सुधार के लिये विजय ही प्राप्त की और सन् १९१६ के युद्धकालीन भत्तो से लेकर अब तक उसके प्रयत्न केवल मजदूरी के वास्तविक मूल्य के कुप्रभावों को कम करने में ही लगे रहे। यह एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसे उलटना ही आवश्यक है यदि राष्ट्रीय श्रम आन्दोलन के माध्यम से कोई राष्ट्र निर्माणकारी क्रिया को प्राप्त करना अभीष्ट है।

इस प्रकार हम देख चुके हैं कि भारत के प्रथम केन्द्रीय श्रम संगठन (**AITUC**) का निर्माण इसलिये नहीं हुआ कि तत्कालीन यूनियन ऐसा

संगठन चाहते थे परन्तु इसलिये हुआ क्योंकि ऐसे निर्माण की मांग अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियां कर रही थीं। हम बाद में यह भी देखेंगे कि श्रम आन्दोलन के दूसरे केन्द्र–**INTUC** के निर्माण का विचार भी राजनीतिक नेताओं ने श्रमिकों की आवश्यकता के अनुरूप न करके ऊपर से दबाव के कारण ही किया। यह भारत के श्रम आन्दोलन का बहुत ही अनोखा लक्षण है और बहुत से स्वतन्त्र यूनियनों के पाये जाने का स्पष्टीकरण है। यूनियनों के परस्पर विरोध के प्रश्न पर भी यह प्रकाश डालता है। श्रम सम्बन्धी नीति और कानून के प्रश्नों पर कोई भी निर्णय यदि श्रम आन्दोलन के इस इतिहास की उपेक्षा करके किया जायेगा तो अवश्य ही यथार्थता से परे होगा। दो प्रमुख परिस्थितियों का यहां विचार करना आवश्यक होगा जो **AITUC** के निर्माण के समय थीं। उस समय सारे देश में फैला श्रमिकों का अकेला अखिल-भारतीय संगठन आल इण्डिया रेलवे मेन्स फेडरेशन था। इस फेडरेशन ने यह निर्णय लिया कि वह **AITUC** से सम्बद्ध नहीं होगा, यद्यपि फेडरेशन के व्यक्तिगत यूनियनों को यह छूट दी गई कि यदि वे चाहें तो यूनियन स्तर पर उससे सम्बद्ध हो सकती हैं। दूसरी महत्वपूर्ण परिस्थिति यह थी कि सरकारी कर्मचारियों को **AITUC** की सदस्यता ग्रहण करने पर रोक थी क्योंकि उन्हें औद्योगिक श्रमिक नहीं समझा जाता था।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम आन्दोलन के प्रति **AITUC** का रुख ही देश के श्रमिक नेताओं के बीच होने वाले बहुतांश झगड़ों के लिये प्रमुख कारण रहा है। प्रारम्भ में **AITUC** तो **Second International** से सम्बद्ध था, परन्तु १९२२-२३ में रूस ने **Third International** बनाया, जिसके द्वारा समस्त बिश्व के ट्रेड यूनियनों में अनेक गुप्तचर भेजे गये। उन्हें रूस से धन और निर्देश मिलते थे और वे रूस के राज-नीतिक स्वरूप के उद्देश्यों की ही पूर्ति करते थे। भारत के कम्युनिस्टों ने श्री एम० एन० राय के नेतृत्व में जिन्हें बाद में बहिष्कृत कर दिया

गया था, सैनिक क्रान्तिकारी कार्यवाही करना प्रारम्भ किया जिसके फलस्वरूप कानपुर और मेरठ में प्रख्यात षड़यन्त्र हुए। आरम्भ में तो इन कम्युनिस्टों की सहायता श्रम–नेतृत्व के सभी अंगों ने की। इन दोनों षड़यन्त्रों ने तो पंडित जवाहरलाल नेहरू और श्री सुभासचन्द्र बोस के समान प्रख्यात व्यक्तित्यों को भी श्रम के क्षेत्र में सर्व श्री डांगे, मिराजकर और सरदेसाई आदि की सहायतार्थ खींच लिया। परन्तु द्वितीय या तृतीय इन्टर नेशनल की सदस्यता को लेकर **AITUC** में भीषण मतभेद उत्पन्न हुआ। श्री एन० एम० जोशी ने द्वितीय और कम्युनिस्टों ने तृतीय इन्टर नेशनल में सम्मिलित होने का समर्थन किया। और कम्युनिस्टों ने इस प्रश्न पर यूनियनों में तोड़ फोड़ करनी प्रारम्भ की और उन सब पर सभी प्रकार की रीति नीतियों द्वारा आक्रमण किया जो **AITUC** को रूस का प्रतिनिधि बनने से रोकना चाहते थे। सन् १९२९ की नागपुर कान्फ्रेंस में कम्युनिस्टों ने इस विवाद को **AITUC** के तत्कालीन अध्यक्ष श्री जवाहरलाल की मौन सम्मति पर भारत के प्रथम राष्ट्रीय श्रम संगठन को तृतीय इन्टर नेशनल का सदस्य बना दिया। ऐसा कहा जाता है कि **AITUC** का यह वोट स्पष्ट बहुमत से नहीं वरन छलछद्म द्वारा प्राप्त किया गया था।

कम्युनिस्टों के इन ढंगों से दुखी होकर श्री एन० एम० जोशी **AITUC** से बाहर निकल आये और उन्होंने एक नया केन्द्रीय संगठन नेशनल फेडरेशन आफ लेवर के नाम से बनाया। इस नये संगठन और **AITUC** के मध्य संघर्ष का दूसरा कारण रायल कमीशन से सहयोग के प्रश्न पर उठा। श्री एन० एम० जोशी ने श्रमिकों का पक्ष रायल कमीशन के समक्ष प्रस्तुत किया और कम्युनिस्टों ने सहयोग नहीं दिया। क्योंकि कम्युनिस्टों का विचार ब्रिटिश सरकार से असहयोग की थी जो कांग्रेस नीति के अनुरूप था इसलिये भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने उनका समर्थन किया।

तद्पुरान्त सन् १९४७ तक ट्रेडयूनियन आन्दोलन में एकता और

विघटन की अनेक स्थितियां उत्पन्न हुयीं और ढेंकुल के खेल के अनेक विभिन्न दृश्य देखने में आये। कम्युनिस्टों द्वारा **AITUC** पर नियन्त्रण स्थापित करने पर शीघ्र ही कम्युनिस्टों के खेमें में विघटन प्रारम्भ हुआ। बामपक्षीय विप्लववादियों ने एक नया संगठन **RED-BODY** के ध्वज के नीचे प्रारम्भ किया। परन्तु यह संघर्ष अल्पकालीन था और एक वर्ष के भीतर ही रेड बाडी समाप्त होकर **AITUC** में मिल गई। इसी प्रकार बहुत दीर्घकाल तक **N. F. L.** और **AITUC** के बीच एकता स्थापित करने के लिये अनेक प्रयत्न किये गए। इन प्रयत्नों में राजनीतिक परिस्थितियों के परिवर्तनों ने भी सहायता पहुंचाई। सन १९३५ के विधेयक द्वारा जो प्रान्तीय स्वायत्तता स्थापित की गई, जिसके द्वारा श्रमिकों को रजिस्टर्ड यूनियनों के समूह से प्रतिनिधित्व के आधार पर वोट देने का अधिकार मिला जिसके द्वारा वे प्रान्तीय विधायिकाओं में अपने प्रतिनिधि भेज सकती थी, इस पार्श्व-भूमिका में एकता के प्रयत्न बहुत ही आवश्यक हो गये। और सर्व श्री जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नरायन, एन० एम० जोशी, जमुनादास-मेहता, एस० सी० जोशी और एम० एन० राय (जो उस समय डा० महमूद बनकर कार्य कर रहे थे) की एक संयुक्त समिति बनाई गई और सन १९३८ में **NFL** की समाप्ति हो गई और सभी पुनः **AITUC** में कार्य करने लगे।

यहाँ सन् १९३५ के एक्ट के श्रम आन्दोलन पर एक प्रभाव का दर्णन करना आवश्यक है। भारत सरकार विधेयक १९१५ के अनुसार प्रथम विधायिकाएं १९२१ में बनी और केन्द्रिय तथा प्रान्तीय विधायिकाओं में श्रम को प्रतिनिधित्व नामजदगी द्वारा दिया गया। यह प्रबंध केंद्र में सन् १९४७ तक चलता रहा और इन वर्षो में अर्थात् १९२१–१९४७ तक श्री एन० एम० जोशी ने श्रम का केंद्रीय व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व किया। प्रांतीय स्वायत्तता १९३५ में मिलने पर, जैसा पहिले कहा जा चुका है रजिस्टर्ड यूनियनों के समूह से

सदस्यता के आधार पर श्रम प्रतिनिधि चुने जाते थे । इसके कारण बोगस सदस्यता प्रारंभ हो गई। प्रत्येक यूनियन ने यह प्रयत्न किया कि अधिक वोट–शक्ति प्राप्त करने के लिए अपनी सदस्यता अधिक दिखलाये । इसके प्रतिफल के रूप में बोगस लेखा रीतियां अपनाई जाने लगीं। कम्यूनिस्टों ने ट्रेडयूनियन आन्दोलन में नियोजित छलसाधन द्वारा बोगस सदस्यता और लेखा कार्य में हद कर दी। राजनीति का ट्रेडयूनियनों में प्रभावी आक्रमण हुआ।

ट्रेडयूनियन आंदोलन के इन्हीं परिवर्तनों के पीछे पीछे द्वितीय महायुद्ध का पदार्पण हुआ, जिनके अनुसार शिखर पर एकता की छायात्मक समरूपता दिखती थी और नीचे तह में सभी के साधनों से उत्पादित दारुण कलह। प्रारम्भ में कम्युनिस्टों ने सभी युद्ध संबंधी प्रयासों का विरोध किया। कांग्रेस ने भी यह ब्रिटिश बिरोधी विचारधारा को पसंद किया। श्री एन० यम० जोशी ने तटस्थ नीति अपनाई। उनकी वैचारिक स्थिति को **AITUC** ने अधिकारिक रूप से स्वीकृति दे दी और नई प्राप्त एकता के स्पष्ट रूप से ध्वस्त होने को रोकने के लिए विभिन्न यूनियनों को स्वतंत्रता दे दी गई, परन्तु एन० एम० राय ने आश्चर्यजनक रूप से एक दूसरा ही पलटा खाया और बहुत सक्रियता से युद्ध प्रयासों का समर्थन किया। इस कार्य के लिए उन्होंने एक अलग संगठन खड़ा किया और सरकार ने इस फेडरेशन को बढ़ावा देने के लिए काफी वित्तीय सहायता और समर्थन दिया। यह सत्य है कि बाद में जब रूस मित्र राष्ट्रों से मिल गया तो कम्यूनिस्टों ने भी युद्ध प्रयासों में सहायता देने का निर्णय किया और इसके निमित्त उन्हें जेल से रिहा किया गया जब कि राष्ट्रवादी जेलों में पड़े रहे। युद्ध काल में **ILO** की बैठक बिल्कुल नहीं हुई और जब सन् १९४५ और १९४६ में परिवर्तित परिस्थितियों में यह बैठक हुई तो सरकार ने बिना पूछे ही श्रमप्रतिनिधियों को नामजद कर दिया।

इस समय भारत सरकार श्रम मोर्चे पर काफी सक्रिय हो गई

थी और उसने वायसराय की कार्यकारी काउंसिल के तत्कालीन श्रम सदस्य डा० बी० आर० अम्बेदकर और उनके सहायक के रूप में एस० सी० जोशी को श्रम के रायल कमीशन के सुझावों पर कार्यवाही करने के लिए नियुक्त किया । उनकी प्रेरणा से एक तथ्य–अन्वेषक कमेटी की नियुक्ति तत्कालीन परिस्थितियों के अध्ययन के लिए की गई और १९४५–४७ की अवधि में वर्तमान श्रम–कानून के काफी बड़े हिस्से का ढांचा तैयार हो गया और संराधन एवं अन्य यन्त्रों की पूर्ण कल्पना की गई । सन् १९४७ में जब राष्ट्रीय सरकार बनी तो तत्कालीन मुख्य श्रमायुक्त श्री एस०सी० जोशी को श्रम कानून के विभिन्न प्राविधानों के क्रियान्वयन का कार्य सौंपा गया । आज का सम्पूर्ण ढांचा उनके और अपने आज के राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि के कार्यों के प्रति कृतज्ञ हैं ।

राष्ट्रीय सरकार के निर्माण के साथ ही श्री बल्लभभाई पटेल ने बड़ी दृढ़ता से एक नए केन्द्रीय श्रमसंगठन के निर्माण की वकालत की । उनका यह विश्वास था कि राष्ट्रीय सरकार को संगठित श्रमिकों का समर्थन अवश्य प्राप्त होना चाहिए और इस कार्य के लिए **AITUC** पर निर्भर नहीं रहा जा सकता, क्योंकि वह विदेशी समर्थन पर पल रहा है और विदेशी मालिकों के इशारे पर उनकी इच्छानुसार अपना रंग बदलता रहा है । इसलिए सन् १९४७ में भारतीय राष्ट्रीय ट्रेडयूनियन कांग्रेस का निर्माण किया गया । इस कार्य के निमित्त श्री बल्लभभाई पटेल को बहुत हद तक अहमदाबाद के मजदूर महाजन के श्रमिकों पर निर्भर रहना पड़ा, उसमें से बहुत अधिक लोगों को इस कार्य में लगाया गया । शक्ति प्राप्त करने के बाद कांग्रेस को गर्व उत्पन्न हो गया । सरकार प्रायः **INTUC** के लिए खुले आम पक्षपात करने लगी और इस प्रकार से **INTUC** का आकार और ख्याति बढ़ी ।

ऐसा कहा जाता है कि **INTUC** के आदर्शवाद की उत्पत्ति

श्री गांधी जी के द्वारा अहमदाबाद में मजदूर–महाजन के निर्माण के समय बनाये गये पूंजीपतियों के ट्रस्टीशिप और मजदूरों की सहकारी कार्य–भक्ति के सिद्धान्तों से हुई। इस आदर्शवाद में भारतीय संस्कृति के मूल्यों की एक झलक अवश्य ही है परन्तु इस बिषय में यह विचार प्रस्तावना अधूरी है और भगवतगीता और अन्य समान ग्रन्थों में विकसित अपने पुरातन सिद्धान्त की कल्याणकारी व्यावहारिक पूर्णता का भी इसमें अभाव है, इस तर्क के अतिरिक्त श्रम पर महात्मा गांधी के सिद्धांतों के सम्बंध में यह अवश्य कहा जायगा कि उनकी कल्पना एक बहुत ही संदेहास्पद परिस्थिति की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए की गई थी और उसमें व्यवहारिक सफलता के प्रोत्साहकों और दृढ़ दार्शनिक आधार का अभाव ही है। अहमदाबाद का रंगमंच, जहां इस सिद्धांत की परिभाषा की गई थी, इसकी पार्श्वभूमिका में सन् १९२६-२७ में हुई बम्बई की ६ माह लम्बी टेक्सटाइल कर्मचारियों की हड़ताल को हम सामने रख सकते हैं। बहुत से जानकारी रखने वाले व्यक्तियों का कहना है कि अहमदाबाद के लिए मिल मालिक बम्बई की हड़ताल चाहते, थे जिससे वे अहमदाबाद में अपने नव-निर्मित मिलों के लिए बाजारों की स्थापना कर सकें। इस उद्देश्य के लिए ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने एक ओर तो बम्बई के हड़तालियों की आर्थिक सहायता की और दूसरी ओर अहमदाबाद में अपने ही श्रमिकों के बीच गांधी जी को अपने सत्य और अहिंसा के सबन्धों के प्रयोग के लिए बुलाया। यद्यपि इस समस्त प्रक्रिया ने पूंजीपतियों के उद्देश्यों को भलीभांति पूरा किया, गांधी जी के पास अपने आलोचकों को यह बतलाने के लिए तर्क का अभाव था कि एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उन्होंने बंबई की हड़ताल का फैसला क्यों नहीं कराया और अहमदाबाद के मजदूर महाजन में ही अपने खेमा क्यों गाड़े पड़े रहे। अपने प्रारंभ से ही आज तक **INTUC** पूंजीपतियों और सरकार जैसे मालिकों के हाथ में खेलती रही, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती

है । वास्तव में राजनीतिज्ञों द्वारा श्रमिकों को सभी कार्यों में सभी प्रकार से धोखा ही मिलता है और उनकी अज्ञानता का शोषण अन्य मालिकों की स्वार्थ-सिद्धि के लिए किया जाता है। किसी भी श्रम-आयोग का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि भारतीय श्रम परिस्थितियों के इस आधार भूत तथ्य की पकड़ कर ले और वह यदि कोई यथार्थ और अच्छा कार्य करने की इच्छा रखता है, तो इसकी जड़ो को उखाड़ फेंके ।

वर्तमान के समीप आने पर हम घटनाओं के इतने करीब आ जाते हैं कि कोई मूल्यांकन करना कठिन है । स्वतन्त्रता के बाद **INTUC** ने अपनी कार्यवाहियों को सारे देश में फैलाया और भारत के सर्वाधिक प्रतिनिधि श्रमिक संगठन होने का दावा किया। अपने विकास के प्रारम्भिक काल में उसने अहमदाबाद के प्रयोगों से बहुत कुछ पाया । बम्बई की कांग्रेस सरकार में सन् १९३७ में श्रममंत्री के तत्कालीन सेक्रेट्री के नाते श्री गुलजारीलाल नंदा ने सन् १९३८ के बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक को पास कराने जैसे कुछ प्रयोग किए । इस प्रकार के प्रयोगों से मिले अनुभवों ने भारत सरकार की नीतियों और **INTUC** के विकास को अत्यधिक प्रभावित किया ।

श्री एम० एन० राय द्वारा युद्धकाल में संस्थापित **NFL** कुछ समय तक चला। परन्तु फिर कांग्रेसी खेमें में विघटन हुआ और समाजवादी श्री जयप्रकाशनारायण के नेतृत्व में बाहर निकल आए और बाद में बबी समाजवादी पार्टी के संरक्षण में एक तृतीय श्रम संगठन हिंद मजदूर सभा का निर्माण हुआ । सर्व श्री एम०एन० राय और वी०वी कर्निक ने हिन्द मजदूर सभा **HMS** को अपनाया और **NFL** की प्राकृतिक मृत्यु हो गई। कुछ अन्य व्यक्ति भी थे जो इन परिवर्तनों में से किसी से प्रसन्न नहीं थे । उन्होंने सन् १९४८ में **UTUC** बनाया । बोल्शेविकों और **RSP** के विस्फोटक गुटों की धारणा कि **HMS** में समाजवादियों का एक बड़े अकेले गुट के रूप में शासन हो जावेगा, इसी धारणा का ही यह प्रमुखतः प्रतिफल था । **UTUC** के निर्माण का मुख्य उद्देश्य हय

प्रतीत होता है कि उन्हें सरकार द्वारा बनाई जाने वाली विभिन्न त्रिदलीय समितियों पर प्रतिनिधित्व करना अभीष्ट था। इस प्रकार से हमारे चार केन्द्रीय श्रम संगठनों का निर्माण हुआ, जिन्हें आज राष्ट्रीय त्रिदलीय समितियों में स्थान प्राप्त है।

इन त्रिदलीय समितियों की उत्पत्ति का कारण १९२९ और १९४३ के परिवर्तन थे। रेलवे यूनियनों के दबाव के कारण सन् १९२९ से सरकार और रेलवे यूनियनों के मध्य नियमित रूप से बैठकें होने लगीं। उस समय सर्व श्री वी०वी० गिरि और एस० सी० जोशी ने सभी श्रमिकों के हित के लिए त्रिदलीय समितियों की आवश्यकता पर बल दिया। इसी आधार पर तात्कालिक श्रम मंत्री श्री रामास्वामी मुदालियर ने सन् १९४३ में प्रथम भारतीय श्रम कान्फ्रेंस का आवाहन किया। उस समय कुछ अनुभव पोर्ट ट्रस्ट में किए गए कार्य का भी उपलब्ध था, जिसके अनुसार तृतीय दशक के पूर्वार्ध में नामजद श्रम प्रतिनिधि की व्यवस्था प्रारम्भ की गई थी। इन मीटिंगों के अनुभवों का एकत्रीकरण करके डा० अम्बेदकर ने **ILO** की सामान्य व्यवस्था के अनुसार त्रिदलीय समितियों को सन् १९४४ में स्थायित्व प्रदान कर दिया।

श्रम क्षेत्र में अभिनव प्रवेश **BMS** और **HMP** का हुआ है। इन दोनों में से पहिले के दीर्घकालीन महत्व के सम्बन्ध में अभी कुछ भी कहना जल्दबाजी होगी। पंचायत का कार्यक्षेत्र बम्बई और महाराष्ट्र के हिस्सों में ही सीमित है। दूसरे के सम्बन्ध में हमनेअपनी प्रस्तावना के प्रारम्भिक अनुच्छेदों में विभिन्न लिखित वर्णनों का संदर्भ दिया है। **BMS** के रूप में भारतीय श्रम स्थिति में पूर्णरुप से एक नवीन तत्व का प्रवेश किया है और इस सम्भावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि चाहे वर्तमान वस्तु स्थिति किसी व्यक्ति के विश्वास को डिगा दे, भविष्य बहुत हद तक इसी के हाथ रहेगा।

भारत के श्रम के इतिहास के इस समीक्षात्मक पूर्वालोचन से अनेक

महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। उन्हें निम्नलिखित रूप से सारांशित किया जा सकता है–

(क) भारतीय ट्रेड यूनियन आन्दोलन अभी तक सुविचारित रूप से अपना कोई केन्द्र नहीं बना सका है।

(ख) भारत के अनेक केन्द्रीय श्रम संगठनों की उत्पत्ति तात्कालिक राजनीतिक आन्दोलनों में निहित है।

(ग) दो बड़े श्रम संगठनों में से **AITUC** विदेशों से अपनी प्रेरणा ग्रहण करता है जब कि **INTUC** कांग्रेस सरकार और पूंजीपतियों पर बहुत कुछ निर्भर है।

(घ) श्रमक्षेत्र में अधिकतर यथार्थ और अच्छे कार्यों के निर्माता अनेक संचरणशील और स्फूर्तिदाई व्यक्ति थे, जो राजनीति से स्वतन्त्र थे। यह तथ्य और दूसरे तथ्य जैसे अभी भी अनेक असंबद्ध श्रम यूनियनें और फेडरेशन हैं, और श्रम का असंगठित भाग बहुत विशाल है, एक बहुत ही महत्वपूर्ण विचार पर प्रकाश फेंकते हैं जिसका ध्यान श्रमनीति बनाते समय रखना चाहिए।

(ङ) भारत का श्रम कानून और त्रिदलीय समितियों का प्रसाधन **ILO** के द्वारा दिए गए माडल के अनुरूप है।

(च) भारतीय श्रम आन्दोलन ने अभी तक भारतीय श्रम की यथार्थ मजदूरी को बढ़ाने के लिए कुछ नहीं किया है और अपने जन्म के समय से ही उसका प्रमुखकार्य यथार्थ-मजदूरी के बढ़ाव को रोकना ही रहा है।

हम यही कह सकते हैं कि भारत का ट्रेड यूनियन आन्दोलन अभी उसके राजनीतिक यंत्र का ही एक हिस्सा है और अपने राष्ट्रीय जीवन

की आर्थिक व सामाजिक संस्था के रूप में योग्य स्थान को नहीं प्राप्त कर सका है। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि वह अभी तक केवल अपना संगठनात्मक और कानूनी पक्ष ही विकसित कर सका है और प्राविधिक पक्ष के संदर्भ में अभाव से पीड़ित है। इसके प्रतिफल में भारतीय श्रमिक की कोई आर्थिक प्रगति नहीं हो सकी है और औद्योगीकरण की समस्त प्रक्रिया कृषि प्रेमी जनता पर लादी गई एक घटना मात्र प्रतीत होती है।

——o——

प्रकाशक—
महामंत्री
भारतीय मजदूर संघ, उत्तर प्रदेश
२, नवीन मार्केट
कानपुर

मूल्य २५ पैसे

मुद्रक—
टिप-टाप प्रिन्टर्स
२४/९१, बिरहाना रोड,
कानपुर—१
फोन नं ६९१११